शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

बौद्ध धर्म : नैतिकता और विश्व शांति

शरणपाल सिंह (शोधार्थी)
डॉ.मनीष टी.मेश्राम (शोध निर्देशक)
स्कूल ऑफ़ बुद्धिस्ट स्टडीज एंड सिविलाईजेशन
गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय
ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

बौद्ध धर्म वास्तव में मन के विकास की उच्चतम अवस्था प्राप्त करने का एक मार्ग है। इस मार्ग का आधार 'नैतिकता' है अर्थात 'नैतिकता' बौद्ध धर्म का अभिन्न अंग है। बिना नैतिकता के न तो बुद्ध की शिक्षाओं का आचरण किया जा सकता है और न ही बिना नैतिकता के किसी प्रकार की शांति प्राप्त की जा सकती है। इसलिए शांति व्यक्तिगत स्तर पर हो या विश्व स्तर पर बिना नैतिकता के प्राप्त नहीं की जा सकती। प्रस्तुत शोध पत्र में बौद्ध धर्म में नैतिकता का स्थान और विश्व शांति में उसकी उपादेयता पर विचार किया गया है।

मुख्य शब्द : *नैतिकता, तृष्णा, जागरूकता, आसक्ति, मानसिक अवस्था, अनित्य, अनात्म, विपर्यास, सापेक्ष, कुशल, अकुशल, चित्त, प्रज्ञा, समानता।*

प्रस्तावना

बौद्ध धर्म और नैतिकता के बीच के सम्बन्ध को समझने के लिए इन दोनों को अलग-अलग समझने की आवश्यकता है। नैतिकता का प्रारम्भ बिन्दु बौद्ध धर्म नहीं, बल्कि मानव सभ्यता के साथ विकसित हुई जिसका विश्व के धर्म संस्थापकों ने अपनी सुविधा व अनुभव के आधार पर इसका उपयोग किया, लेकिन बुद्ध के सम्बन्ध में यह अवधारणा कितने प्रमाण में सही है या नहीं ये कहना कठिन है लेकिन 'नैतिकता' बुद्ध के मार्ग का अभिन्न अंग है। साथ ही यह भी सत्य है कि नैतिकता का पालन करना ही बौद्ध धर्म नहीं है बल्कि 'नैतिकता उच्च मानसिक अवस्था आर्थत निर्वाण प्राप्त करने का एक साधन है। इसका अर्थ यह है कि भले ही केवल नैतिकता का पालन करना बौद्ध धर्म नहीं, लेकिन साथ ही यह भी सत्य है कि बिना नैतिकता के विकास की उच्च अवस्था को प्राप्त नहीं किया जा सकता। इस बात को ऐसे भी समझ सकते हैं कि कोई व्यक्ति शील का पालन तो करता है, लेकिन सांसारिक विषयों के प्रति तृष्णा वैसे ही बनी रहती है, जिसके प्रति वह बिलकुल भी स्मृतिमान नहीं है और तृष्णा तो दुःख का कारण है, जो बुद्ध की मुख्य खोज का अंग है। ये दो ऐसे विपरीत स्वभाव वाला मनुष्य, विकास की उच्च अवस्था को प्राप्त नहीं कर सकता। तृष्णा के कारण ही मनुष्य का मन दूषित होता है लोभ द्वेष, मोह व दूसरी अकुशल मानसिक अवस्था तैयार होती है। वास्तव में बौद्ध धर्म जिस मानसिक अवस्था की बात करता है, वह हमारे मन की परिशुद्ध व पूर्ण जागरुक अवस्था है, जिसमें मैत्री, करुणा, वीर्य और प्रज्ञा है, जो पूर्ण रूप से स्वभाविक नैतिक तथा किसी भी प्रकार की आसक्ति या तृष्णा से परे है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

जैसे कि हम जानते है कि 'बौद्ध धर्म' बुद्ध की शिक्षाओं का संकलन है, जो उन्होंने बुद्धत्व प्राप्ति के बाद अपने शिष्यों, उपासकों व गृहस्थों को दी थी। बुद्ध ने बताया वह उनका अपना स्वयं का अनुभव था, जिसे उन्होने एक मार्ग के रुप में लोगों के सामने रखा। उन्होंने बताया कि मनुष्य के दुःख का कारण बाहर नहीं, बल्कि मनुष्य के मन के अन्दर उसकी स्वयं की आसक्ति है और आसक्ति भी ऐसी बात के प्रति जो वास्तव में है ही नहीं। मनुष्य जब ये समझ जाता है कि आसक्ति व्यर्थ है, वह उस आसक्ति को छोड़ देता है और निर्वाण को प्राप्त होता है। निर्वाण- मनुष्य के मन की विशुद्ध व पूर्ण जागरुक अवस्था है।

बौद्ध धर्म का दृष्टिकोण

बुद्ध, संसार के अस्तित्व को या उसकी सत्यता को परिभाषित करते हुए बताते हैं कि संसार अनित्य है, किसी भी वस्तु की अपनी कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं है - अर्थात- अनात्म है और किसी भी प्रकार की आसक्ति - दुःख है।1 ये तीनों बातें बुद्ध ने स्वयं बतायी हैं। बौद्ध धर्म में इन्हें अस्तित्व के तीन लक्षण के नाम से जाना जाता है। वास्तव में ये तीन लक्षण इस संसार का सत्य है। ये 'त्रि-लक्षण' बौद्ध धर्म की तीन मोहरें या बौद्ध धर्म का दिल है। कोई भी मनुष्य जो बुद्ध के मार्ग पर चलना चाहता है, वह इस सत्य को आत्मसात किये बिना आगे नहीं बढ़ सकता। ये एक ऐसी बात है जैसे किसी व्यक्ति को बिना दिल के जिन्दा रखने कि व्यर्थ कल्पना। इन तीन लक्षणों का विश्लेषण इस प्रकार है :

अनित्य : अनित्य का अर्थ है, नित्य न होना अर्थात परिवर्तनशील अर्थात संसार अनित्य है। यहाँ कुछ भी नित्य नहीं है। संसार की प्रत्येक वस्तु, प्राणी, हमारी काया, विचार, भावना, मन, कल्पना, तारे, ग्रह, उपग्रह, सौर-मण्डल आकाश-गंगा सभी अनित्य है। कुछ भी है नहीं, बल्कि हो रहा है। सब कुछ एक परिवर्तन की प्रक्रिया के अधीन है। हर क्षण परिवर्तन हो रहा है। कोई भी वस्तु दो क्षण एक जैसी नहीं है, क्षण-क्षण परिवर्तन हो रहा है। इस परिवर्तन को हम दो भागो में विभाजित करके समझ सकते हैं - एक स्थूल परिवर्तन, जिसे हम महसूस कर सकते हैं। संसार में जो कुछ भी रोजमर्रा के जीवन में घट रहा है, उस परिवर्तन को हम महसूस कर सकते हैं - जैसे कल हम जिनके साथ रहते थे, आज वो हमारे आसपास भी नहीं है, कल तक हम जिनके बिना एक पल भी रह नहीं सकते थे, आज हम उनकी शक्ल भी देखना नहीं चाहते हैं या हमें उनके बिना ही जिंदगी गुजारनी पड रही है, हमारे आसपास की परिस्थिति, चीजें आदि में होने वाले परिवर्तन को हम हर पल व जीवन के प्रत्येक पहलू पर महसूस कर सकते हैं। मौसम के बिगडते हुए संतुलन को भी हम सब अच्छी तरह से महसूस कर रहे हैं। सूक्ष्म परिवर्तन - इस परिवर्तन को हम महसूस नहीं कर सकते हैं। उदाहरण के लिए आज जहां हिमालय है वहां कभी समुद्र था और आज भी ये प्रक्रिया जारी है। मुनष्य जब से पृथ्वी पर जन्मा है तब से हिमालय को देखता आ रहा है। असंख्य पीढियां तो यही मानते हुए चली गयी कि हिमालय स्थिर है। ये पृथ्वी ग्रह जिस पर हमारी असंख्य पीढ़िया चली गयीं वास्तव में एक दिन मंगल गृह की तरह जीवन शून्य हो जाएगी, अगर, वह किसी बडे उल्का पिंड से टकराकर ध्वस्त होने से बच गयी तो।2 इस प्रकार के परिवर्तन को महसूस करने के लिए हमें मिलियंस ऑफ इयर्स जीवित

रहना पडेगा। हमारी पृथ्वी सूर्य, हमारा सौर-मण्डल, आकाश गंगा सब चक्कर लगा रहे हैं। इसका अर्थ यह है कि हम अपनी आकाश गंगा के साथ इस अंतरिक्ष में कहां-कहां यात्रा कर रहे हैं , यह हमें नहीं पता। हम तो हर शाम बचपन से तारों की स्थिति एक जैसी ही देख रहे हैं।

अनात्म

अनात्म का अर्थ है आत्मा का न होना। हिन्दू या क्रिश्चन के अनुसार आत्मा या सूक्ष्म शरीर होता है, जो हमारे स्थूल शरीर में वास करता है और जब हमारा ये स्थूल शरीर जीर्ण-शीर्ण हो जाता है, ये आत्मा उस शरीर को छोड देती है जिसे मृत्यु कहते हैं, ये आत्मा या सूक्ष्म शरीर जिसे ये अमर-अजर मानते हैं, दूसरा शरीर धारण कर लेती है। जिसे ये पुनर्जन्म कहते हैं और उससे भी आगे- पुनर्जन्म उस आत्मा को किस वर्ण या योनी में मिलेगा, उसके कर्म ये तय करते हैं। बौद्ध धर्म के अनुसार इस पूरे ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी घटित होता है, वह सब परिस्थिति जन्य है, एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति निर्माण होती है जो एक दम उददेश्यहीन है, केवल एक निरंतर परिवर्तन की प्रक्रिया के तहत चलता रहता है (हम सब प्राणी मात्र भी उसी प्रक्रिया का हिस्सा हैं)। हमें वस्तुएं बनती और नष्ट होती हुई दिखाई देती हैं। वास्तव में न तो चीजें बन रही हैं और न ही नष्ट हो रही हैं, बल्कि निरंतर परिर्वतन की प्रक्रिया के तहत एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति बन रही है। चीजों का बनना और नष्ट या विघटन होना केवल सापेक्ष मात्र है। हम सब प्राणी तथा संसार की प्रत्येक चीजें व हलचल उसी प्रक्रिया का हिस्सा है।

निरंतर परिवर्तन की प्रक्रिया के कारण जब परिस्थितिवश दो या दो से अधिक प्रत्यय एकत्र आते हैं, तो हमें लगता है कि वस्तु का निर्माण हो गया और निरंतर परिवर्तन की प्रक्रिया के कारण परिस्थिति एक जैसी नहीं रह सकती, इसलिए एक परिस्थिति आती है जब प्रत्यय अलग हो जाते हैं, जिससे हमें लगता है कि अमुक प्राणी या वस्तु मर गया या नष्ट हो गई। अब प्रत्यय किसी दूसरी परिस्थिति का हिस्सा बन गये। नई परिस्थिति में अलग-अलग प्रत्यय आकर मिले और एक वस्तु या प्राणी बना। अब ये वस्तु प्राणी पहली वस्तु या प्राणी से न तो अलग है और न ही समान है। इस को हम इस तरह भी समझ सकते हैं कि दो प्रत्यय अ और ब एक परिस्थिति के कारण एकत्र आते हैं और उनके एकत्र आने से वस्तु स का निर्माण होता है। निरंतर परिवर्तन की प्रक्रिया के तहत प्रत्यय अ और प्रत्यय ब का विघटन हो जाता है। वस्तु स जो प्रत्यय अ और ब के एकत्र होने से बनी थी, का अस्तित्व अपने आप ही नष्ट हो जाता है। इसमें ध्यान देने वाली बात ये है कि स का अस्तित्व न तो अ और ब के एकत्र आने के पहले था और न ही दोनों प्रत्यय के अलग होने के बाद रहा। इसका अर्थ ये है कि वास्तव में स न तो कभी जन्मा और न ही कभी मरा, वह तो केवल प्रत्यय अ और ब का सापेक्ष मात्र रूप था, जिसको हम अज्ञानतावश एक स्वतंत्र अस्तित्व वाली वस्तु मान लेते हैं। अज्ञानतावश सापेक्ष रूप को स्वतंत्र व सत्य मानना ही वस्तु मात्र के प्रति या संसार के प्रति आसक्ति का कुल स्रोत है। हम सभी सांसारिक बातों को इसी प्रकार देखते हैं और दुःख में पडे रहते हैं। इस उदाहरण को हम थोडा और आगे लेकर जायेंगे, प्रत्यय अ और ब जो विघटन से अलग-अलग हो गये थे- अब प्रत्यय अ निरंतर परिवर्तन की प्रक्रिया के तहत प्रत्यय क के साथ मिल जाता है और दोनों प्रत्ययों के परस्पर मिलन से वस्तु ख बनती है। अब वस्तु

ख न तो स से अलग है और न ही स के एक दम जैसी है। इसको पुनर्जन्म कह सकते हैं, लेकिन उस अर्थ में नहीं, जिस अर्थ में आत्मवादी लोग समझते हैं। ये इस उदाहरण से स्पष्ट है।

दुःख

दुःख का मूल कारण तृष्णा है आसक्ति है। नाना प्रकार के सांसारिक विषयों को पाने की इच्छा ही हमारे दुःख का मूल कारण है। तृष्णा या आसक्ति सबसे बडा बंधन है, "धीर विद्वान् पुरुष लोहे, लकड़ी तथा रस्सी के बंधन को दृढ नहीं मानते। वस्तुतः दृढ बंधन - सारहीन पदार्थों में लिप्त होना या मणि, कुंडल, औलाद तथा पति/पत्नी में इच्छा का होना है। (धम्मपद-गाथा-345)3 मकडी जिस प्रकार अपना जाल बुनती है और स्वयं ही उसी में बंधी रहती है, संसार के जीवों की दशा भी ठीक वैसी है। (धम्मपद गाथा-347)4 तृष्णा तीन प्रकार की होती है- 1. काम तृष्णा - नाना प्रकार के विषयों की कामना करने वाली तृष्णा। 2. भवतृष्णा-संसार की सत्ता बनाये रखने वाली तृष्णा या इस संसार में बने रहने की इच्छा या संसार के प्रति आसक्ति - जिसके कारण हम इस संसार में बार-बार आना चाहते हैं। 3. विभव तृष्णा-'विभव का अर्थ है, उच्छेद, संसार का नाश करने वाली तृष्णा।'5

अकुशल मानसिक अवस्था

सवाल यह है कि 'तृष्णा निर्माण क्यों होती ? जिसका उत्तर है - अज्ञानता। अज्ञानता के कारण तृष्णा निर्माण होती है, तो फिर ये अज्ञानता क्या है ? अज्ञानता का अर्थ है ''ज्ञान' के विपरीत वाली स्थिति को हम अज्ञानता कहते हैं। अर्थात जहाँ ज्ञान है वहां अज्ञानता नहीं है। अर्थात जहाँ ज्ञान है वहा तृष्णा निर्माण नहीं हो सकती। इस अज्ञान को हम चार विपर्यास के माध्यम से भी जानते हैं, जो इस प्रकार है- 1. अनित्य को नित्य समझना - ज्यादातर परिवर्तन सूक्ष्म होने के कारण उसमें हो रहे परिवर्तन को हम देख नहीं पाते हैं और चीजें एक जैसी नज़र आती हैं। 2. अनात्म को आत्म समझना 3 दुःख को सुख समझकर काम भोगों मे लिप्त रहना 4. जो कुरूप है उसे सुंदर समझना। ये चार गलत दृष्टिकोण ही अज्ञानता है इन गलत दृष्टिकोण के कारण ही तृष्णा का निर्माण होता है और हम दुःख में पड़े रहते है।6

इस तृष्णा के कारण ही हमारे मन में लोभ, द्वेष, मोह, छल-कपट, निंदा, अपेक्षा, ईर्ष्या, ऊंच-नीच, जातिवाद, कटटरपंथी, धर्मवाद, प्रांतवाद, भेद-भाव, आदि-आदि तृष्णा के कारण उत्पन्न होते हैं। इसे ही अकुशल मानसिक अवस्था कहते हैं। इसी अकुशल मानसिक अवस्था के कारण मनुष्य हिंसक बनता है, चोरी करता है, झूठ, धोखेबाज, बलात्कारी, निर्दयी आदि बनता है। वैसे ये जहर थोडी-बहुत मात्रा में आदतों के रूप में सभी में होते है, क्योंकि मुनष्य जन्म ही अज्ञानता में होता है। इस अकुशल मानसिक अवस्था के कारण ही मनुष्य जीवन भर दुःख भोगता रहता है। इन जहरों या अकुशल मानसिक अवस्थाओं का सर्वास्तिवाद या अभिधम्म पिटक में सही प्रकार से वर्गीकरण किया गया है।

नैतिकता और बौद्ध धर्म का चित्त शुद्धि मार्ग

प्रज्ञापारमिता सुत्त में 'स्वाभाव शून्य' की बात कही गयी है। शून्य का अर्थ परिशुद्धता है अर्थात मनुष्य का स्वाभाव स्वाभाविक रुप से शुद्ध ही है।7 लेकिन अज्ञानता के कारण या संसार को देखने के दृष्टिकोण गलत होने के कारण चित्त में तृष्णा का निर्माण होता है और तृष्णा के कारण चित्त में विभिन्न प्रकार की अकुशल मानसिक अवस्थाओं का जन्म होता है। जिनका

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

जिक्र पहले किया जा चुका है। ये अकुशल मानसिक अवस्थायें ही मनुष्य को सांसारिक बन्धनों में बांधकर रखती हैं।

परिशुद्ध चित्त अवस्था या बुद्धत्व की अवस्था की प्राप्ति के मार्ग में ये अकुशल मानसिक अवस्थायें हैं, जो बाधाओं के रूप में खड़ी रहती है और मुनष्य को मार्ग से भटकाती रहती है। बुद्ध घोष की अट्ठकथा 'विशुद्धि मग्ग' के अनुसार बुद्ध बताते हैं कि इन बाधाओं को केवल शील समाधि और प्रज्ञा के द्वारा ही हटाया जा सकता है। शील- अर्थात नैतिकता, समाधि अर्थात ध्यान या चित्त की एकाग्रता और प्रज्ञा- सत्य के प्रति जागरूकता या सत्य जानने की क्षमता। 'शील या नैतिकता' बौद्ध धर्म जिस उच्च मानसिक अवस्था की बात करता है, उसे प्राप्त करने का आधार केवल नैतिकता है। नैतिकता केवल वह नहीं जो बुद्ध ने प्रत्यक्ष रूप से विनय के रूप में या शीलों के रूप में अपने शिष्यों को दी, बल्कि बुद्ध की यदि सारी शिक्षाओं का आकलन किया जाये तो पता चलता है कि बुद्ध ने जो कुछ प्रज्ञा को लेकर कहा या समाधि (ध्यान) को लेकर कहा इसके अतिरिक्त जो शिक्षा बचती है वह सब नैतिकता ही है। उदाहरण के लिये-आर्य अष्टांगिक मार्ग को भी तीन भागों में विभाजित किया गया है - प्रज्ञा, शील व समाधि। प्रथम दो अंग (सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प) - प्रज्ञा, दूसरे तीन अंग (सम्यक वाचा, सम्यक कर्मान्त, सम्यक आजीविका) - शील तथा अंतिम तीन अंग (सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति, सम्यक समाधि) - समाधि। इसलिए नैतिकता को बौद्ध धर्म से अलग करके नहीं देख सकते हैं।

शील, समाधि, प्रज्ञा और उच्च मानसिक अवस्था

त्रिपिटक से पता चलता है कि कोई आगंतुक जब बुद्ध की शरण में आता था, संघ में उसकी उपसंपदा के बाद उसे कुछ विनय दिया जाता था, जैसे चीवर कैसे पहनना है, चलते समय कैसे चलना है तथा संघ अनुशासन के नियम और शील आदि साथ ही ध्यान पढाया जाता था। उसे धीरे-धीरे संघ अनुशासन के अनुरूप बनाया जाता था। चित्त एकाग्रता व आचरण पर एक समान बल दिया जाता था। क्योंकि मन की शुद्धता के ये दोनों मुख्य साधन हैं। केवल नैतिक आचरण से मन की परिशुद्धता या पूर्ण जागरुकता आना संभव नहीं है, अंतिम सत्य क्या है ? उसके प्रति भी जागरुकता होनी आवश्यक है। क्योंकि नैतिकता या शील, समाधि ये केवल साधन मात्र हैं अंतिम सत्य तक पंहुचने के लिए। जब तक अंतिम सत्य तक नहीं पंहुचते, तब तक संसार के प्रति आसक्ति या तृष्णा बनी रहती है और हमारा मन विषय भोगों की तरफ दौड़ता रहता है। वास्तव में इन दोनों साधनों की मदद से ही उच्च मानसिक अवस्था को प्राप्त किया जा सकता है। वास्तव में जब कोई व्यक्ति शीलों को आचरण करना शुरू करता है तो उसकी पकी हुई आदतें (संस्कार) ये समझने नहीं देती कि उसे अपने अन्दर परिवर्तन क्या करना है ? उसकी जिंदगी में जो दुःख आ रहे हैं, किन आदतों के कारण आ रहे हैं। चार गलत दृष्टिकोणों का प्रभाव हमारे चित्त पर इतनी गहराई तक होता है कि उस प्रभाव को सूक्ष्म स्तर तक समझने के लिए प्रज्ञा की आवश्यकता होती है। बिना प्रज्ञा के कोई भी व्यक्ति अपने स्वभाव को नहीं समझ सकता। ऊपरी तौर पर हमें लगता है कि सब कुछ ठीक चल रहा है, लेकिन हमारे जीवन में दुःखों का आना जारी रहता है। व्यक्ति को ये समझ में ही नहीं आता कि ये दुःख उसके किस

कर्म का परिणाम है ? उन दुखों का कारण क्या है ? बुद्ध ने व्यक्ति के इस जटिल स्वभाव की तुलना महानिदान सुत्त में उलझे हुए 'धागे के गोले' से की है। इसलिए इस जटिल स्वभाव को बिना प्रज्ञा के देखना असंभव है। ये 'जटिल स्वभाव' चार गलत दृष्टिकोणों (चार विपर्यास या अज्ञान) के द्वारा मन पर पड़े नाना प्रकार के संस्कारों का परिणाम है। इन संस्कारों को बुद्ध ने दस बंधन या संयोजन में विभाजित करके समझाया है। थेरवाद के अनुसार व्यक्ति दस संयोजन को तोडकर ही अंतिम सत्य या उच्च मानसिक अवस्था या पूर्ण जागरुक अवस्था या मन की परिशुद्धता को प्राप्त करता है। ये दस बंधन इस प्रकार हैं -

1.सत्कायदृष्टि 2. विच्छिकित्सा (संशय) 3. शीलवृत परामर्श 4. कामराग 5. रूपराग 6. अरूपराग 7. व्यापाद 8. अविद्या 9. मान 10. औद्धत्य।8

इन संयोजनों को केवल प्रज्ञा के द्वारा ही देखा जा सकता है या जाना जा सकता है। और जब तक जानेंगे नहीं तो इन्हें तोडेंगे कैसे ? थेरवाद के अनुसार बुद्ध की सारी शिक्षा इन बन्धनों को समझने व उनसे पूर्ण रूप से मुक्त होने के लिए है। इस प्रकार इन बन्धनों को जानने के लिए प्रज्ञा की आवश्यकता है। प्रज्ञा, चित्त की एकाग्रता के बिना विकसित नही हो सकती है और चित्त की एकाग्रता के लिए शील का होना आवश्यक है। सामान्य तौर पर भी किसी भी बात को समझने के लिए थोडी ही सही, लेकिन प्रज्ञा की आवश्यकता होती है और प्रज्ञा प्राप्ति के लिए मन की स्थिरता या एकाग्रता का होना आवश्यक है और अंततः मन की एकाग्रता या स्थिरता, केवल शील या नैतिक आचरण के आधार पर ही प्राप्त की जा सकती है। ये बहुत ही स्वाभाविक बात है कि कोई मुनष्य किसी को दुःख पहुंचाकर शान्ति की कल्पना नही कर सकता। किसी को दुःख देकर क्षणिक असुरिया आनंद लिया जा सकता है, लेकिन चिरस्थाई शांति नहीं। मन की परिशुद्धता या पूर्ण जागरूकता प्राप्त करना कोई अकस्मात घटने वाली घटना नहीं है। ये एक लम्बी जागरूक प्रक्रिया है। व्यक्ति शीलों का या नैतिक आचरण शुरू करता है और साथ ही ध्यान भावना शुरू करता है। नैतिक आचरण से मन की हलचल शांत होती है, जिससे मन को एकाग्र करने में मदद मिलती है और एकाग्रता से प्रज्ञा का विकास होता है। व्यक्ति को अपना जटिल स्वभाव धीरे-धीरे समझ आने लगता है। जटिल स्वभाव की कड़ियाँ धीरे-धीरे सुलझने लगती हैं, कौन-सी कड़ी कहाँ जुडी है ये समझ आने लगता है और स्वभाव की जटिलताएं समाप्त होने लगती हैं, मिथ्या दृष्टिकोण टूटने लगते हैं और नैतिक आचरण गहरा होने लगता है। जितना आचरण गहरा होता जाता है, चित्त की एकाग्रता बढती है, चित्त जितना ज्यादा एकाग्र होगा, प्रज्ञा उतनी ही ज्यादा विकसित होगी और प्रज्ञा जितनी ज्यादा विकसित हागी, स्वभाव की जटिलता और ज्यादा स्पष्ट रूप से दिखायी देने लगती है, जिससे मिथ्या दृष्टिकोणों को तोड़ने में उतनी ही आसानी होती है। आचरण गहरा होता जाता है और चित्त धीरे-धीरे परिशुद्धता की ओर बढने लगता है।

बुद्ध के ये तीन सिद्धांत शील, समाधि और प्रज्ञा आन्तरिक रूप से जुडे हैं। प्रज्ञा के बिना नैतिक आचारण संभव नहीं, क्योंकि नैतिकता क्या है ? और इसका उपयोग क्या है ? ये प्रज्ञा से ही जाना जा सकता है और नैतिक आचरण के बिना ध्यान संभव नहीं, चित्त एकाग्र नहीं हो सकता। द्वेषी स्वभाव वाला व्यक्ति कभी एकाग्र

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

नहीं हो सकता और बिना एकाग्रता के प्रज्ञा का विकास संभव नहीं। इस प्रकार ये तीनों आन्तरिक रूप से जुडे हैं।

अब हम अपने इस लेख में वहां तक पंहुच चुके हैं, जहां हम कह सकते हैं कि बिना नैतिक आचारण के बौद्ध धर्म में कुछ प्राप्ति नहीं की जा सकती है और जब तक व्यक्ति इन संयोजनों में से पहले तीन बंधन तोड़कर बुद्धत्व की धारा में नहीं आता, तब तक हम ये दावा नहीं कर सकते कि हमारी नैतिकता की नींव कितनी मजबूत है। इसका अर्थ यह है कि नैतिकता को हम बौद्ध धर्म से अलग करके नहीं देख सकते हैं।

नैतिकता और विश्वशान्ति

नैतिकता एक व्यक्तिपरक है, जिसका सम्बन्ध व्यक्ति के आतंरिक विकास से है। इस नैतिकता को व्यक्तिगत तौर पर एक जागररूक प्रक्रिया के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। यह हम अब तक लेख से जान चुके हैं। अगर हम चाहते हैं कि विश्व में शांति स्थापित हो, तो उसका आधार केवल नैतिकता ही हो सकता है और नैतिकता- मैत्री, करुणा और बुंधता, समानता जो बुद्धत्व के गुण है, के आधार पर स्थापित की जा सकती है। हिंसा, जातिवाद, असमानता, कट्टरवाद, या धर्मवाद के आधार पर स्थापित नहीं हो सकती है। हिंसा के आधार पर बलपूर्वक या जातिवाद, असमानता, कट्टरवाद या धर्मवाद पर आधारित शांति धधकते हुए ज्वालमुखी के समान है जो कभी भी फट सकता है। तलवार के जोर पर केवल युद्ध जीते जा सकते हैं लेकिन शांति नहीं। शांति का आधार यदि असमानता है तो एक दिन जरूर ऐसा आता है, जब लोगों को इस बात का एहसास होता है कि हमारे साथ समानता का व्यवहार नहीं है, उसी दिन से उसका विरोध शुरू हो जायेगा और फिर शांति का किला ढहने में देर नहीं लगती। असमानता के आधार पर लायी गयी शांति एक दिन रक्त क्रांति को जन्म देती है। वास्तव में जब हम विश्व शांति की बात करते है, तो हम स्वीकार करते हैं कि विश्व शांति नहीं है और हमारे सामने अशांति, असुरक्षा, जातिवाद, असमानता, हिंसा, बलात्कार, घूसखोरी आदि की घटनाएं सामने आकर खडी हो जाती हैं। अगर हम इन मुद्दों पर गंभीरता से चिंतन करते हैं, तो हमें स्वयं ही एहसास होता है कि इन सभी गंभीर मुददों का मूल स्रोत, व्यक्तिगत तौर पर प्रत्येक व्यक्ति के मन में है। हमारी व्यक्तिगत तृष्णा का ही ये विस्तारित रूप है। इनके अनगिनत उदाहरण दिए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए एक व्यापारी कोई फैक्ट्री लगाता है, जिसमें उसे पर्यावरण से सम्बंधित प्रमाण पत्र सरकार से लेने पडते हैं, लेकिन उसकी शुरुआत सम्बंधित मंत्री से मिलकर बहुत महंगी जमीन उस मंत्री को घूस देकर हासिल करने से होती है। जब कोई मंत्री या व्यापारी ऐसा करता है, तो उसका क्या परिणाम होता है और इसी तरह से फिर वह जरूरी प्रमाण पत्र भी इसी प्रकार हासिल करता है। ये सब उसी व्यक्तिगत तृष्णा के कारण होता है। उससे कई तरह के प्रदूषण बढेंगे, उसे चिंता नहीं, उससे पेड़-पौधों का कितना नुकसान होगा, उसे परवाह नहीं। अपनी तृष्णा के सामने उसे कुछ नज़र नहीं आता। ऐसे ही अलग-अलग तरह की बातें व्यक्तिगत तृष्णा के कारण घटती रहती हैं। परिणाम में असमानता, हिंसा, असुरक्षा, अशांति जैसी बाते हम व्यक्तिगत तौर पर प्रसारित करते रहते हैं। यदि हमें विश्व में शांति चाहिए तो हमें इसके मूल कारण तृष्णा पर वार करके नैतिकता के उच्च मूल्यों, मैत्री, करुणा, समानता, बंधुता, दान की भावना को अपने

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

अन्दर बढ़ाना होगा तभी विश्व में शांति प्रस्थापित हो सकती है।

आधुनिक विश्व और नैतिकता की आवश्यकता

आज विश्व के सामने मौसम परिवर्तन, प्रदूषण, हिंसा, सुरक्षा, असमानता, सरकारी भ्रष्टाचार, भुखमरी, आतंकवाद जैसे गंभीर मुददे हैं, जिनका समय रहते निवारण जरूरी है, नहीं तो मनुष्य अपनी तृष्णा की अग्नि से स्वयं ही इस पृथ्वी से जीवन को जल्दी ही समाप्त कर देगा। आज बहुत सारे विकसित देश खतरनाक हथियारों का उत्पादन कर रहे हैं, विकासशील देश अपने देश की सुरक्षा के नाम पर उन्हें खरीद रहे हैं। एक स्पर्धा-सी लगी है, खतरनाक से खतरनाक हथियार बनाने की और खरीद कर अपने पास रखने की। अगर किसी भी कारण से युद्ध होता है तो ये हथियार किस पर चलेंगे ? ये दुश्मन पर नहीं, बल्कि मानवता पर चलेंगे, केवल मानवता का विनाश होगा। भारत जैसे खेती प्रधान देश में फसलों की पैदावार बढाने के लिए जहरीले रसयानों का इस्तेमाल अंधाधुंध हो रहा है, जिससे खेती से आने वाली लगभग प्रत्येक वस्तु जहरीली हो चुकी है। इससे मधुमेह, कैंसर, दिल से सम्बंधित जैसी गंभीर बीमारियां तेजी से बढ़ रही हैं। जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण तेजी से बढ़ रहा है। जिसके निकट भविष्य में ही दुष्परिणाम अनियंत्रित होंगे। इनका निवारण केवल व्यक्तिगत तौर पर नैतिक मूल्यों के आचरण से ही संभव है। इसके लिए हम किसी दूसरे को केवल दोष देकर या नैतिक मूल्यों का केवल दूसरों को उपदेश देकर, विश्व में शांति प्रस्थापित नहीं कर सकते, बल्कि उन मूल्यों को स्वयं अपनाकर, दूसरों को इसकी प्रेरणा अपने व्यवहार से देकर ही विश्व में शांति प्रस्थापित की जा सकती है।

उपसंहार

अंत में हम कह सकते हैं कि नैतिकता बौद्ध धर्म का अभिन्न अंग है। मन की उच्च या परिशुद्ध अवस्था केवल शील या नैतिक आचरण से ही प्राप्त की जा सकती है। मनुष्य अज्ञानता के कारण (अज्ञानता जो तृष्णा का कारण) सुख की चाह में मिथ्या चीजों के पीछे भागता रहता है। उन मिथ्या बातों को पाने के लिए बुरे कर्म भी करने से भी नहीं चूकता। इसे ही तृष्णा कहते हैं इस तृष्णा से ही मनुष्य में नाना प्रकार की मानसिक अकुशलता उत्पन्न होती है। लेकिन अंततः उसे दुःख के अलावा कुछ हाथ नहीं लगता। ऐसे कर्मो से मनुष्य न केवल अपना नुकसान करता है, बल्कि अपने परिवार, समाज और देश का भी नुकसान करता है, जिससे विश्व में अशांति बढती है। विश्व अशांति का कारण प्रत्येक मनुष्य की तृष्णा में निहित है। इस तृष्णा या इन मानसिक अकुशलताओं को शील या नैतिक आचरण की जागरुक प्रक्रिया-शील, समाधि और प्रज्ञा के द्वारा ही खत्म करके मन को परिशुद्ध बनाया जा सकता है और विश्व में शांति प्रस्थापित की जा सकती है। बिना शांति प्रस्थापित किये पृथ्वी पर जीवन ज्यादा दिन सुरक्षित नहीं रह सकता।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 पंडित राहुल सांस्कृत्यायन द्वारा अनुवादित विनयपिटक के 'खन्धक'-महावग्ग पृष्ठ सं 82-83, 'बुद्ध की प्रथम यात्रा वाराणसी में पंचवर्गीय भिक्षु - आयुष्मान अज्ञात कौंडिन्य वप्प, भद्दीय, महानाम और आयुष्मान अश्वजित को प्रव्रज्या के दौरान बुद्ध ने 'त्रि-लक्षण' को समझाया है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 दिसम्बर 2023
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

2 जोंगसर जाम्यंग खेंत्से रिन्पोचे द्वारा लिखित 'What makes you not a Buddhist' के प्रथम अध्याय 'Fabrication and impermance' के पृष्ठ सं. 21 पर अनित्यता की व्याख्या करते हुए उदाहरण के रूप में दिया है।

3-4 डॉ. वी. दोर्जे नेगी, उपाचार्य, भारतीय बौद्ध दर्शन, केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, वाराणसी द्वारा अनुवादित 'धम्मपद' के तण्हावग्गो' पृष्ठ सं 489-490, गाथा न. 345 व 346, मुख्य रूप से यह ग्रन्थ हिंदी में है लेकिन गाथाओं का अनुवाद तीन भाषाओ - तिब्बती, किन्नौरी व हिंदी में है गाथाओं की व्याख्या मात्र हिंदी में की गयी है।

5 'बौद्ध दर्शन मीमांसा- आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृष्ठ सं 49 पर 'दूसरा आर्यसत्य - 'दुःखसमुक्ष' में तीन प्रकार की तृष्णा में तीसरे प्रकार की तृष्णा - 'विभवतृष्णा में 'विभव' का अर्थ - उच्छेद करना, संसार का नाश करना। चार्वाक के अनुसार जीवन को सुखमय बनाना ही उनका उद्देश्य होता है। वे इस चिन्ता से तनिक भी विचलित नहीं होते कि उन्हें ऋण चुकाना पड़ेगा। जब यह देह भस्म की ढेर बन जाती है तब कौन किसे ऋण चुकाने आता है। संसार के उच्छेदवाद का यही चरम अवसान है।

6 'लिविंग विद अवेयरनेस अध्याय - 5 निरिक्षण - भंते संघरक्षित अनुवादक - धम्मचारी प्रसन्नबोधि, प्रकाशक त्रिग्रंथमाला, नागपुर।

7 नव वैपुल्ल्य सुत्त के दूसरे ग्रन्थ 'प्रज्ञापारमिता सूत्र के 'प्रज्ञापारमिताहृदय सूत्र से

8 माहलिसुत्त (दीघनिकाय पृष्ठ सं 57-58) में श्रावकयान की चार भूमियाँ - स्रोतापन्न, सकृदागामी, अनागामी और अर्हत' के विषय में बताया है। जिसमें 'अर्हत' की अवस्था प्राप्त करने के लिए दस संयोजनों (बन्धनों) को तोडना पड़ता है। प्रत्येक भूमि की अवस्था को प्राप्त करने लिए कुछ संयोजन को तोड़ना पड़ता है।

- *Vision and Transformation: Cheptor I - Perfect Vision; Urgen Bhante Sangharakshita, Windhorse Publications, Birmingham, UK*
- *Great Buddhist Philosopher of World: Cheptor II, Madhyamik Philosophy, Dr Rajendra Prashad Shakya, Gautam Book Centre, Shahadra Delhi-93*
- *विनय पिटक : पंडित राहुल सांस्कृत्यायन The Corporate Body of the Buddha Education Foundation, Taiwan*
- *Living With Awareness : Urgen Bhante Sangharakshita, Windhorse Publications, Cambridge, CB1 3AN UK*
- *बौद्ध दर्शन मीमांसा - आचार्य बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक-'चौखम्बा विद्याभवन', वाराणसी - 221001, उत्तर प्रदेश*
- *धम्मपद (पालि एवं भोटपाठ) अनुवादित-डॉ. वी. दोर्जे नेगी, प्रकाशक: दि कॉपोरेट बॉडी ऑफ दि बुद्धा एजुकेशन फाउंडेशन, ताईवान*
- *What makes you not a Buddhist- Dzongsar Khyentse Rinpoche, Publication; Timeless,The Art Book Studio, South Extension Part-I, Kotla Mubarkpur, New Delhi-110003.*
- *'Living Ethically'- Bhante Sangharakshita, Windhorse Publications, Cambridge, CB1 3AN UK*
- *'विशुद्धि मार्ग (पहला भाग) आचार्य बुद्धघोष अनुवादकः त्रिपिटकाचार्य भिक्षु धर्मरक्षित*
- *'A Guid to the Buddhist Path'- Sangharakshita, Windhorse Publications, 136, Renfield Street, Glasgow G2 3AU.*

सन्दर्भ ग्रन्थ